International Journal of Sanskrit Research 2023; 9(3): 184-185

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2023; 9(3): 184-185
© 2023 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 17-02-2023
Accepted: 22-04-2023

Ritu Rani
Research Scholar, Department of Sanskrit, Panjab University, Chandigarh, Haryana, India

Corresponding Author:
Ritu Rani
Research Scholar, Department of Sanskrit, Panjab University, Chandigarh, Haryana, India

कालिदास प्रणीत अभिज्ञानशाकुन्तलम् नाटक में प्रयुक्त सूक्तियाँ

Ritu Rani

प्रस्तावना

कवि कुल तिलक, प्रखर प्रतिभावान, उपमा की अनुपम मूर्ति, कोमल कान्त पदावली के प्रणेता महाकवि कालिदास संस्कृत साहित्य गगन के नक्षत्र हैं। कालिदास भारतीय साहित्य ही नहीं, समूचे विश्व–साहित्य का शृंगार है। इसलिए इन्हें 'कविकुलगुरु' की उपाधि से विभूषित किया गया है।

महाकवि कालिदास के नाम से बहुत से ग्रन्थ उपलब्ध होते हैं। लेकिन प्रमुख कृतियाँ सात मानी गई हैं :–

दो महाकाव्य – 1) कुमारसम्भवम् 2) रघुवंशम्
दो खण्डकाव्य – 1) मेघदूतम् 2) ऋतुसंहारम्
तीन नाटक – 1) मालविकाग्निमित्रम् 2) विक्रमोर्वशीयम्
3) अभिज्ञानशाकुन्तलम्

इस शोध पत्र का विषय 'अभिज्ञानशाकुन्तलम्' नाटक में प्रयुक्त सूक्तियों के अध्ययन को चुना गया है।

अभिज्ञानशाकुन्तलम्

'अभिज्ञानशकुन्तलम्' कालिदास का ही नहीं अपितु समस्त संस्कृत रुपक–साहित्य का उत्कृष्ट नाटक है। यह संस्कृत नाटकों का सिरमौर है। इसमें कालिदास की नाट्य–कला का चरम परिपाक मिलता है। एक बहुप्रचलित कथन के अनुसार–

'काव्येषु नाटकं रम्यं तत्र रम्या शकुन्तला'

इसी कारण भारतीय–अभारतीय सभी विद्वानों ने इस नाटक की भूरि–भूरि श्लाघा की है।

सूक्ति का अर्थ

'सु' और 'उक्ति' इन दो शब्दों के संयोजन से 'सूक्ति' पद निर्मित हुआ है। यहाँ 'सु' उपसर्ग रूप में है। जिसका तात्पर्य है–शोभन, सरल, अधिक इच्छापूर्वक। 'अमरकोश' में 'सु' को पूजा, बड़ाई के अर्थ में निरूपित किया गया है।[1]

'उक्ति' शब्द वच् धातु से क्तिन् प्रत्यय से निष्पन्न हुआ है।[2] जिसका अर्थ बोलना, उच्चारण करना, प्रकाशन करना है।

अतः सूक्ति का अर्थ है–अच्छा कथन या सुन्दर उक्ति। 'सूक्तं शोभनोक्तिविशिष्टम्'–अर्थात् विशिष्ट रूप से सुशोभित उक्ति सूक्ति है।[3]

अभिज्ञानशाकुन्तलम् सूक्तियाँ

'विनीतवेषेण प्रवेष्ट व्यानि तपोवनानि नाम।'[4]

आश्रम में सीधे–सादे वेश में ही जाना चाहिए। जब राजा दुष्यन्त महर्षि कण्व के आश्रम में प्रवेश करते हैं तब सारथि को गहने और धनुष देकर कहते हैं कि तपोवन में विनीत वेशभूषा में प्रवेश करना चाहिए। अतः उस समय तपोवनों के प्रति विनम्रभाव की अपेक्षा रहती थी।

कई बार व्यक्ति को उपयोगी वस्तु भी हानिकारक लगती है। तब कालिदास यह सूक्ति प्रस्तुत करते हैं–

'आशंकसे यदग्नि तदिदं स्पर्शक्षमं रत्नम्।'[5]

यह सूक्ति उस समय कही गई जब प्रियवंदा राजा दुष्यन्त को शकुन्तला के विषय में बताती है तो राजा मन ही मन शकुन्तला को राजर्षि कन्या जानकर कहता है कि हृदय! तू आशा मत छोड़! जो दुविधा थी, वह दूर हो गई। जिसे तू अग्नि समझकर छूने से डरता था, वह तो छूने योग्य रत्न निकला। अर्थात् जिसे तुम अग्नि समझकर सशंक हो वह तो स्पर्श के योग्य रत्न है।' ऐसी आशंका के कारण ही कई बार मनुष्य लाभकारी कार्यों से वंचित रह जाते हैं।

एक अन्य सूक्ति में कालिदास ने कहा है–

'भवितव्यानां द्वाराणि भवन्ति सर्वत्र।'[6]

राजा दुष्यन्त यह सूक्ति उस समय कहते हैं जब वे कण्व के आश्रम में जाते हैं तो शुभ शकुन होने की सूचना पाते हुए स्वयं कहते हैं कि इस तपोवन की भूमि में मेरी दाहिनी भुजा क्यों फड़क रही है। यहां भला क्या मिलने वाला है? परन्तु हां, जो मिलना होता है वह तो सर्वत्र मिल सकता है। 'होनकार के द्वार सर्वत्र होते हैं।' इसलिए मानना पड़ता है कि 'भवितव्यता खलु बलवती।'[7]
यह सूक्ति उस समय कही जाती है जब राजा दुष्यन्त विदुषक को शकुन्तला व स्वयं के प्रेम के विषय में पूछते हैं तब विदुषक कहता है आश्रम में आपने प्रेमवार्ता को हंसी में टाल दिया था। तब मेरी मिट्टी की बुद्धि भी वही सच समझ बैठी थी। जो होने वाला होता है, वह होकर रहता है। अर्थात् 'होनहार बलवान होता है।'
कई परिस्थितियों में मानव का क्रोध विनाशकारी दृष्टि अपना लेता है, अतः कालिदास ने क्रोध की तुलना अग्नि से की है–

'कोऽन्यो हुतवहाद् दग्धुं प्रभवति।'[8]

ऋषि दुर्वासा को शाप देकर जाता हुआ देखकर अनुसूया प्रियंवदा से कहती है कि 'आग के अतिरिक्त और कौन जला सकता है?' क्रोधी भी अपनी क्षमतानुसार विध्वंसकारी सिद्ध हो सकता है। इसका कारण क्रोध के समय बुद्धि का असन्तुलित होना है।

सतीमपि ज्ञातिकुलैसंश्रयाजनोऽन्यथा भर्तुमतीं विशंकते।
अतः समीपे परिणेतुरिष्यते प्रियाऽप्रिया वा प्रमदा स्वबन्धुभिः।।[9]

शकुन्तला के विषय में शारंगरव राजा दुष्यन्त को यह सूक्ति उस समय कहता है जब राजा को शकुन्तला के विषय में कुछ याद नहीं आता है और शारंगरव चाहता है कि शकुन्तला अपने पति के साथ रहे क्योंकि निरन्तर सम्बन्धियों के घर में रहने वाली सधवा स्त्री के सम्बन्ध में, उसके सती होने पर भी जन–समाज उल्टी शंका करने लगता है। अतः चाहे स्त्री अपने पति को प्रिय हो या अप्रिय उसके बन्धुजन उसे पति के पास ही देखना चाहते हैं। लोक–व्यवहार की दृष्टि से पत्नी पति के पास ही सुशोभित होती है।

'अहो विघ्नवत्यः प्रार्थितसिद्धयः।'[10]

राजा दुष्यन्त यह सूक्ति उस समय कहता है जब शकुन्तला के लिए पर्णकुटी में आता है। तब वहाँ गौतमी आ जाती है। इस पर शकुन्तला राजा को फिर आने का निमन्त्रण देती है। तब राजा शकुन्तला से अलग होते हुए पहले स्थानपर पहुँचकर ठंडी सांस लेते हुए 'आह! अभीष्ट सफलताएँ विघ्न वाली होती हैं।' यद्यपि सुख और दुःख दोनों की ही अवस्थाएँ हैं, तथापि प्रायः ऐसा कहा जाता है कि जीवन में दुःख पाना तो सरल है, परन्तु सुख पाना कठिन।

निष्कर्ष

कालिदास ने अपनी रचनाओं में अनेक प्रेरणादायी सूक्तियों का वर्णन किया है। ये सूक्तियाँ प्राचीन काल के साथ–साथ आधुनिक काल के लिए भी प्रेरणादायी हैं। यदि मानव उनके द्वारा निर्दिष्ट सूक्तियों का आचरण करें तो समाज को सुदृढ़ एवं सुव्यवस्थित बना सकता है।

सन्दर्भ

1. अमरकोषः, काण्ड–3, अव्ययवर्ग 4.5, पृष्ठ–633
2. शब्दकल्पद्रुम, भाग–1, पृष्ठ–218
3. वही, भाग–5, पृष्ठ–389
4. अभिज्ञानशाकुन्तलम् अंक–1, पृष्ठ–20
5. वही, अंक 1, श्लोक 24
6. वही, अंक 1, श्लोक 14
7. वही, अंक 6, श्लोक 338
8. वही, अंक 4, श्लोक 172
9. वही, अंक 5, श्लोक 18
10. वही, अंक 3, श्लोक 152